ॐ श्री कृष्ण शरणं मम ॐ

卐 ज्ञानकर्मसंन्यासयोग नामक चौथा अध्याय 卐

ठाकुर भिम सिंह द्वारा प्रस्तुत

श्रीमद्भगवद्गीता अमृत

श्लोकों के गूढ़ रहस्यों के साथ

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

ज्ञानकर्मसंन्यासयोग- नामक चौथा अध्याय

01-18	सगुण भगवान का प्रभाव और कर्मयोग का विषय
19-23	योगी महात्मा पुरुषों के आचरण और उनकी महिमा
24-32	फलसहित पृथक-पृथक यज्ञों का कथन
33-42	ज्ञान की महिमा

श्लोक १ - **इमं विवस्वते योगं, प्रोक्तवा नहम व्ययम् ।**
विवस्वान्मनवे प्राह, मनुरिक्ष्वाकवे ऽब्रवीत् ॥
एवं परम्पराप्राप्तम् इमं राजर्षयो विदुः ।
स कालेनेह महता योगो नष्टः परंतप ॥२॥
स एवायं मया तेऽद्य योगः प्रोक्तः पुरातनः ।
भक्तोऽसि मे सखा चेति रहस्यं ह्येतद् उत्तमम् ॥३॥

श्रीभगवान् बोले - मैं ने इस अविनाशी योग को सूर्य से कहा था । सूर्य ने अपने पुत्र वैवस्वत मनु से कहा, और मनु ने अपने पुत्र राजा इक्ष्वाकु से कहा । इस प्रकार परम्परा से प्राप्त हुए कर्मयोग को राजर्षियों ने जाना; परन्तु हे परन्तप, बहुत दिनों के बाद यह ज्ञान इस पृथ्वीलोक में लुप्त सा हो गया. तुम मेरे भक्त और प्रिय मित्र हो, इसलिए वही पुरातन कर्मयोग आज मैंने तुम्हें कहा है, क्योंकि यह कर्मयोग एक उत्तम रहस्य है. (४.०१-०३)

I taught this imperishable yoga to the demigod ("The Sun") who expounded it to his son King Manu named Vivaswaan.
BG 4.2: O subduer of enemies, the saintly kings thus received this science of Yog in a continuous tradition. But with the long passage of time, it was lost to the world.
BG 4.3: The same ancient knowledge of Yog, which is the supreme secret, I am today revealing unto you, because you are My friend as well as My devotee, who can understand this transcendental wisdom.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

अर्जुन उवाच :

अपरं भवतो जन्म परं जन्म विवस्वतः ।
कथम् एतद् विजानीयां त्वम् आदौ प्रोक्तवान् इति ॥४॥

अर्जुन बोले— आपका जन्म तो अभी हुआ है तथा सूर्यवंशी राजा विवस्वान का जन्म सृष्टि के आदि में हुआ था, अतः मैं कैसे जानूं कि आप ही ने विवस्वान से इस योग को कहा था? (४.०४)

BG 4.4: Arjun said: You were born much after Vivasvan. How am I to understand that in the beginning You instructed this science to him?

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्रीभगवानुवाच :

बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन ।
तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परंतप ॥५॥

श्रीभगवान बोले— हे अर्जुन, मेरे और तुम्हारे बहुत सारे जन्म हो चुके हैं, उन सब को मैं जानता हूं, पर तुम नहीं जानते. (४.०५)

BG 4.5: The Supreme Lord said: Both you and I have had many births, O Arjun. You have forgotten them, while I remember them all, O Parantapa.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

अजोऽपि सन्न् अव्ययात्मा भूतानाम् ईश्वरोऽपि सन् ।
प्रकृतिं स्वाम् अधिष्ठाय संभवाम्यात्ममायया ॥६॥

यद्यपि मैं अजन्मा, अविनाशी तथा समस्त प्राणियों का ईश्वर हूं, फिर भी अपनी प्रकृति को अधीन करके अपनी योगमाया से प्रकट होता हूं. (१०.१४ भी देखें) (४.०६)

BG 4.6: Although I am unborn, the Lord of all living entities, and have an imperishable nature, yet I appear in this world by virtue of *Yogmaya*, My divine power.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक ७ - **यदा यदा हि धर्मस्य, ग्लानिर्भवति भारत ।**
अभ्युत्थानमधर्मस्य, तदात्मानं सृजाम्यहम्

हे भरतवंशी अर्जन! जब-जब धर्म की हानी और अधर्म की वृद्धि होती है, तब-तब ही मैं अपने-आप को साकार रूप से प्रकट करता हूँ ।

Whenever there is a decline in righteousness and an increase in unrighteousness, O Arjun, at that time I manifest myself on earth.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक ८ - **परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।**
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे ॥

साधुओं (भक्तों) की रक्षा के लिये, पाप कर्म करनेवालों का विनाश करने के लिये और धर्मकी भलीभाँति स्थाप्ना करनेके लिये, मैं युग-युग में प्रकट हुआ करता हूँ ।

To protect the righteous, to annihilate the wicked, and to re-establish the **Principles of Dharm,** I appear on this earth, age after age.

“Principles of Dharm: the eternal & inherent nature of reality regarded in Hinduism as a cosmic Law underlying right behaviour and social order. And these have been illustrated in our scriptures.

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयः शौचमिन्द्रियनिग्रहः । धीर्विद्या सत्यमाक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम् ॥

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

जन्म कर्म च मे दिव्यम् एवं यो वेत्ति तत्त्वतः ।
त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति माम् एति सोऽर्जुन ॥६॥

हे अर्जुन, मेरे जन्म और कर्म दिव्य हैं. इसे जो मनुष्य भलीभांति जान लेता है, उसका मरने के बाद पुनर्जन्म नहीं होता तथा वह मेरे लोक, परमधाम, को प्राप्त करता है. (४.०६)

BG 4.9: Those who understand the divine nature of My birth and activities, O Arjun, upon leaving the body, do not have to take birth again, but come to My eternal abode.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

वीतरागभयक्रोधा मन्मया माम् उपाश्रिताः ।
बहवो ज्ञानतपसा पूता मद्भावम् आगताः ॥१०॥
ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस् तथैव भजाम्यहम् ।
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः ॥११॥

राग, भय और क्रोध से रहित, मुझ में तल्लीन, मेरे आश्रित तथा ज्ञानरूपी तप से पवित्र होकर, बहुत से मनुष्य मेरे स्वरूप को प्राप्त हो चुके हैं. (४.१०)
हे अर्जुन, जो भक्त जिस किसी भी मनोकामना से मेरी पूजा करते हैं, मैं उनकी मनोकामना की पूर्ति करता हूं. मनुष्य अनेक प्रकार की इच्छाओं की पूर्ति के लिए मेरी शरण लेते हैं. (४.११)

पर याद रहे की सकाम भाव से की गई पूजा जीवन और मृत्यु के चकर से छुटकारा नहीं दिलाता ॥ इच्छा के कारण राग-द्वेष बना रहता है जो कि रजोगुणी होने के कारण मनुष्य को मोह में बाँधता है ।

BG 4.10: Being free from attachment, fear, and anger, becoming fully absorbed in Me, and taking refuge in Me, many persons in the past became purified by knowledge of Me, and thus attained My divine love.

BG 4.11: In whatever way people surrender unto Me, I reciprocate accordingly. Everyone follows My path, knowingly or unknowingly, O son of Pritha.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

काङ्क्षन्तः कर्मणां सिद्धिं यजन्त इह देवताः ।
क्षिप्रं हि मानुषे लोके सिद्धिर् भवति कर्मजा ॥१२॥

कर्मफल के इच्छुक संसार के साधारण मनुष्य देवताओं की पूजा करते हैं, क्योंकि मनुष्यलोक में कर्मफल शीघ्र ही प्राप्त होते हैं. (४.१२) **ऐसे मनुष्य सकामी होते हैं ।**

BG 4.12: In this world, those desiring success in material activities worship the celestial gods, since material rewards manifest quickly.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक १३ - **चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः ।**
तस्य कर्तारमपि मां विद्धयकर्तारमव्ययम् ॥

मेरे द्वारा गुणों और कर्मों के विभाग पूर्वक चारों वरणों की रचना की गयी है । उस सृष्टी रचना आदि का करता होने पर भी मुझ अविनाशी परमेश्वर को तू अकरता जान ।

The four categories of occupations were created by me according to people's qualities and activities. Although I am the creator of this system, know me to be the non-doer and eternal.

उन के गुण और उन के स्वभाव ही उन की पहचान कराते हैं । जैसे : सत्व गुण की प्रधानता वाले स्वमं अपने उस गुण के प्रभाव से वैसा ही बरताव करने लगते हैं, अर्थात कर्तव्य कर्म जैसे पूजापाठ आदि में उनकी रुचि स्वमं (अपने आप) लगी रहती है । उन का अहार-बिहार, व्यहार, आचर-विचार सब में सात्विकता रहती है । ऐसे प्राणी सदेव शान्त स्वभाव वाले, ज्ञानी, गुरुतुल्य और पूजनिये होते हैं ।

जिन मनुष्यों में सात्विक गुण अधिक और षेश राजसिक गुण होते हैं, वे स्वभाव से ही शूरवीर, राजपूत, धर्म और मरियादा के रक्षक, दयावन और सब के हित करने वाले होते हैं ।
जिन मनुष्यों मे रजो गुण अधिक और षेश तमोगुण होता है, वे स्वभाव से ही धन, अर्थ, वाणीजय वेय्पार आदि में रुचि रखने वाले होते है ।

जिन मनुष्यों में तमोगुण की प्रधानता होती है, वे स्वभाव से आलसी, संसारिक वस्तुओं में आसक्ति, तामसी अहार-विहार करने वाले, राक्षसी अथवा असुरी स्वभाव वाले होते हैं । इस श्लोक में भगवान् केवल चारो वर्णों के बारे में ही प्रकाश डाले हैं, पर भगवदभक्त के

विषय में कुछ भी नहीं कहें । वह इसलिये कि एक भगवदभक्त इन चारो वर्णों से परे है । उस की निश्कामता और सारे प्राणीमात्र के प्रति निस्वार्थ सेवाभाव उसे इस संसार बन्धन से मुक्त कर चुका होता है । इसलिये आगे की अध्यायों में भगवान अर्जुन को भगवदभक्त परायण होने के लिये आकर्शित करेगें ।

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

न मां कर्माणि लिम्पन्ति न मे कर्मफले स्पृहा ।
इति मां योऽभिजानाति कर्मभिर् न स बध्यते ॥१४॥

मुझे कर्म का बन्धन नहीं लगता, क्योंकि मेरी इच्छा कर्मफल में नहीं रहती है. इस रहस्य को जो व्यक्ति भलीभांति समझकर मेरा अनुसरण करता है, वह भी कर्म के बन्धनों से नहीं बन्धता है. (४.१४)

BG 4.14: Activities do not taint Me, nor do I desire the fruits of action. One who knows Me in this way is never bound by the karmic reactions of work.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

एवं ज्ञात्वा कृतं कर्म पूर्वैर् अपि मुमुक्षुभिः ।
कुरु कर्मैव तस्मात् त्वं पूर्वैः पूर्वतरं कृतम् ॥१५॥

प्राचीनकाल के मुमुक्षुओं ने इस रहस्य को जानकर कर्म किए हैं. इसलिए तुम भी अपने कर्मों का पालन उन्हीं की तरह करो. (४.१५)

BG 4.15: Knowing this truth, even seekers of liberation in ancient times performed actions. Therefore, following the footsteps of those ancient sages, you too should perform your duty.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

किं कर्म किम् अकर्मेति कवयोऽप्य् अत्र मोहिताः ।
तत् ते कर्म प्रवक्ष्यामि यज् ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात् ॥१६॥

विद्वान् मनुष्य भी भ्रमित हो जाते हैं कि कर्म क्या है तथा अकर्म क्या है, इसलिए मैं तुम्हें कर्म के रहस्य को समझाता हूं; जिसे जानकर तुम कर्म के बन्धनों से मुक्त हो जाओगे. (४.१६)

BG 4.16: What is action and what is inaction? Even the wise are confused in determining this. Now I shall explain to you the secret of action, by knowing

which, you may free yourself from material bondage.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मणः ।
अकर्मणश्च बोद्धव्यं गहना कर्मणो गतिः ॥१७॥

सकाम कर्म, विकर्म अर्थात् पापकर्म तथा निष्कामकर्म (अर्थात् अकर्म) के स्वरूप को भलीभांति जानलेना चाहिए, क्योंकि कर्म की गति बहुत ही न्यारी है. (४.१७)

BG 4.17: You must understand the nature of all three—recommended action, wrong action, and inaction. The truth about these is profound and difficult to understand.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

कर्मण्य् अकर्म यः पश्येद् अकर्मणि च कर्म यः ।
स बुद्धिमान् मनुष्येषु स युक्तः कृत्स्नकर्मकृत् ॥१८॥

जो मनुष्य कर्म में अकर्म तथा अकर्म में कर्म देखता है, वही ज्ञानी, योगी तथा समस्त कर्मों का करने वाला है. (अपने को कर्ता नहीं मानकर प्रकृति के गुणों को ही कर्ता मानना कर्म में अकर्म तथा अकर्म में कर्म देखना कहलाता है) (३.०५, ३.२७, ५.०८, १३.२९ भी देखें) (४.१८)

BG 4.18: Those who see action in inaction and inaction in action are truly wise amongst humans. Although performing all kinds of actions, they are yogis and masters of all their actions.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

यस्य सर्वे समारम्भाः कामसंकल्पवर्जिताः ।
ज्ञानाग्निदग्धकर्माणं तम् आहुः पण्डितं बुधाः ॥१९॥

जिसके सारे कर्मों के संकल्प ज्ञानरूपी अग्नि से जलकर स्वार्थरहित हो गये हैं, वैसे मनुष्य को ज्ञानीजन पण्डित कहते हैं. (४.१९)

BG 4.19: The enlightened sages call those persons wise, whose every action is free from the desire for material pleasures and who have burnt the reactions of work in the fire of divine knowledge.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

त्यक्त्वा कर्मफलासङ्गं नित्यतृप्तो निराश्रयः ।
कर्मण्य् अभिप्रवृत्तोऽपि नैव किंचित् करोति सः ॥२०॥

जो मनुष्य कर्मफल में आसक्ति का सर्वथा त्यागकर, परमात्मा में नित्यतृप्त रहता है तथा (भगवान के सिवा) किसी का आश्रय नहीं रखता, वह कर्म करते हुए भी (वास्तव में) कुछ भी नहीं करता है (तथा अकर्म रहने के कारण कर्म के बन्धनों से सदा मुक्त रहता है). (४.२०)

BG 4.20: Such people, having given up attachment to the fruits of their actions, are always satisfied and not dependent on external things. Despite engaging in activities, they do not do anything at all.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

निराशीर् यतचित्तात्मा त्यक्तसर्वपरिग्रहः ।
शारीरं केवलं कर्म कुर्वन् नाप्नोति किल्बिषम् ॥२१॥

जो आशा रहित है, जिसके मन और इन्द्रियां वश में हैं, जिसने सब प्रकार के स्वामित्व का परित्याग कर दिया है, ऐसा मनुष्य शरीर से कर्म करता हुआ भी पाप (अर्थात् कर्म के बन्धन) को प्राप्त नहीं होता है. (४.२१)

BG 4.21: Free from expectations and the sense of ownership, with the mind and intellect fully controlled, they incur no sin even though performing actions by their body.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

यदृच्छालाभसंतुष्टो द्वन्द्वातीतो विमत्सरः ।
समः सिद्धाव् असिद्धौ च कृत्वापि न निबध्यते ॥२२॥

अपने आप जो कुछ भी प्राप्त हो, उसमें संतुष्ट रहने वाला, द्वन्द्वों (fight, qurrell etc) से अतीत, ईर्ष्या से रहित तथा सफलता और असफलता में समभाव वाला कर्मयोगी कर्म करता हुआ भी कर्म के बन्धनों से नहीं बन्धता है. (४.२२)

BG 4.22: Content with whatever gain comes of its own accord, and free from envy, they are beyond the dualities of life. Being equipoised in success and failure, they are not bound by their actions, even while performing all kinds of activities.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

गतसङ्गस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थितचेतसः ।
यज्ञायाचरतः कर्म समग्रं प्रविलीयते ॥२३॥

जिसकी ममता तथा आसक्ति सर्वथा मिट गयी है, जिसका चित्त **(अन्त-करण)** ज्ञान में स्थित है, ऐसे परोपकारी मनुष्य के कर्म के सभी बन्धन विलीन (**अदृश्य, लुप्त**) हो जाते हैं. (४.२३)

BG 4.23: They are released from the bondage of material attachments and their intellect is established in divine knowledge. Since they perform all actions as a sacrifice (to God), they are freed from all karmic reactions.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक २४ - **ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम् ।**
ब्रम्हैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना ॥

अर्पण अर्थात् जिस से अर्पण किया जाय, वे स्त्रूक, स्त्रुआ आदि पात्र भी ब्रह्म है । हव्य पदार्थ (तिल, जौं गी आदि) भी ब्रह्म है, और ब्रह्मरूप करता के द्वारा ब्रह्मरूप अग्नि में अहुति देनारूप क्रिया भी ब्रह्म है । ऐसे यज्ञ को करनेवाले जिस मनुष्य की ब्रह्ममें ही कर्म-समाधि हो गयी है, उसके द्वारा प्राप्त करने योग फलभी ब्रह्म ही है ।

For those who are completely absorbed in God-consciousness, the oblation is *Brahm*, the ladle with which it is offered is *Brahm*, the act of offering is *Brahm*, and the sacrificial fire is also *Brahm*. Such persons, who view everything as God, easily attain him. (1)

१. ब्रह्म यज्ञ - प्रत्येक कर्म में कर्ता, कारण क्रिया, पदार्थ आदि सब को ब्रह्मरूप से अनुभव करना ।

Realising the doer, the action, the instrument, and object etc., in every action as Brahm. (Shlok 24)

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक २५ - **दैवमेवापरे यज्ञं, योगिनः पर्युपासते ।**
ब्रह्माग्नावपरे यज्ञं, यज्ञेनैवोपजुह्वति ॥

अन्य योगी लोग देव (भगवदर्पणरूप) यज्ञ का ही अनुष्ठान करते हैं और दूसरे योगी लोग ब्रह्मरूप अग्नि में विचाररूप यज्ञके द्वारा ही जीवात्मारूप यज्ञ का हवन करते हैं ।

Some yogis offer sacrifice to God alone with material offerings. Others worship perfectly who offer the self as sacrifice in the fire of the Supreme Truth.

२. भगवदर्पणरूप यज्ञ - सम्पूर्ण क्रियाओं और पदार्थो को केवल भगवान् का और भगवान् के लिये ही मानना । (Shlok 25)
Assuming all actions and objects only God's and only for him.

३. अभिन्नतारूप यज्ञ - असत् से सर्वथा विमुख होकर परमात्मा में लीन हो जाना अर्थात् परमात्मा से भिन्न अपनी स्वतन्त्र सत्ता न रखना ।

Having total disinclination for the unreal, merger in God viz., having no independent existence of one's own apart from God. (Also, shlok 25)

परिशिष्ट भाव - "**ब्रह्माग्नावपरे यज्ञं, यज्ञेनैवोपजुह्वति**" - का यह अर्थ भी ले सकते हैं, - दूसरे योगीलोग संसाररूप ब्रह्म की सेवा के लिये केवल लोक-संग्रहरूप यज्ञ के लिये कर्तव्य-कर्म (यज्ञ) करते हैं, अर्थात् यज्ञार्थ कर्म करते हैं ।
जड़ से सर्वथा विमुख होकर परमात्मा में लीन हो जाना अर्थात् परमात्मतत्व से भिन्न अपनी स्वतन्त्र सत्ता किन्चिन्मात्र न रखना ।

Importance Point – The expression '**Brahmaagnavapare yagyam yajnenaivopajuhvati"** may also mean – Other Yogis to serve Brahm, the embodied world performs duty sacrifice for the sacrifice in the form of welfare of others viz., they perform all actions for the welfare of others (Gita 3/9, 4/23).
When a soul identifies itself with matter it becomes an embodied soul. But when a Being (the soul), by discrimination, having a total disinclination for matter, merges in God i.e., does not have a separate existence of its own apart from God, it is called sacrifice. (2 & 3)

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक २६ - **श्रोत्रादीनीन्द्रियाण यनये, संयमाग्निषु जुह्वति ।**
शब्दादीन्विषयानन्य, इन्द्रियाग्निषु जुह्वति ॥

अन्य योगीलोग श्रोतादि समस्त इन्द्रियों का संयमरूप अग्नियों में हवन किया करते हैं और दूसरे योगीलोग श्ब्दादि विषयों का इन्द्रियेंरूप अग्नि में हवन किया करते हैं ।

Others offer hearing and other senses in the sacrificial fire of restraint. Still others offer sound and other objects of the senses as sacrifice in the fire of the senses. (4 & 5)

४. संयमरूप यज्ञ- एकान्त काल में अपनी इन्द्रियों को विषयों में प्रवृत न होने देना ।
In loneliness not to allow the senses to incline mentally towards the sensual objects. (Shlok 26)

५. विषयहवनरूप यज्ञ - व्यवहारकाल में इन्द्रियों का विषयों से संयोग होने पर भी उनमें राग-द्वेष पैदा न होने देना ।

In day-to-day life to keep the senses free from attachment & aversion even when the senses encounter sense objects. (Shlok 26)

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक २७ - **सर्वाणीन्द्रिय कर्माणि, प्राणकर्माणि चापरे ।**
आत्म संयम योग अगनौ,जुह्वति ज्ञान दीपते ॥

अन्य योगी लोग सम्पूर्ण इन्द्रियोंकी क्रियाओं को और प्राणों की क्रियाओं को ज्ञान से प्रकाशित आत्मसंयमयोग (समाधीयोग) रूप अग्नि में हवन किया करते हैं ।

Some, inspired by knowledge, offer the functions of all their senses and their life energy in the fire of the controlled mind.

६. समाधिरूप यज्ञ - मन-बुधि सहित सम्पूर्ण इन्द्रियों और प्राणों की क्रियाओं को रोक कर ज्ञान से प्रकाशित समाधी में स्थित् हो जाना ।

By restraining all the functions of the senses and breath to get established in trance kindled by knowledge. (Shlok 27)

ie. being in transcendental state.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक २८ - **द्रव्य यज्ञास्तपोयज्ञा, योगयज्ञस्तथापरे ।**
स्वाध्यायज्ञान यज्ञाश्च, यतयः संशितव्रताः

दूसरे कितने ही तीक्ष्न व्रत करनेवाले प्रयत्नशील साधक द्रव्यमय यज्ञ करनेवाले हैं और कितने ही तपोयज्ञ करनेवाले हैं । दूसरे कितने ही योग यज्ञ करनेवाले हैं, तथा कितने ही **स्वाध्याय रूप ज्ञानयज्ञ** करनेवाले हैं ।

Some offer their wealth as sacrifice, while others offer severe austerities as sacrifice. Some practice the eight-fold path of yogic practices, and yet others study the scriptures and cultivate knowledge as sacrifice, while observing strict vows.

७. द्रव्य यज्ञ - सम्पूर्ण पदार्थों को निस्वार्थत भाव से दूसरों की सेवा में लगा देना ।

Utilisation of all materials for the service of others in a selfless spirit. (Shlok 28).

८. तपो यज्ञ - अपने कर्तव्य के पालन में आनेवाली कठिनाइयों को प्रसन्नता पूर्वक सह लेना । (Shlok 28)

Facing difficulties happily while discharging one's duties.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक २९ - **अपाने जुह्वति प्राणं, प्राणेऽपानं तथापरे ।**
प्राणापानगती रुद्ध्वा, प्राणायाम परायणाः ॥

११. प्राणायामरूप यज्ञ - पूरक, कुम्भक और रेचक पूर्वक प्राणायाम करना ।

Control of breaths by "Purak" – (inhalation), "Kumbhak"- (retention) **and** “Rechak”- (exhalation). (Shlok 29)

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक ३० - **अपरे नियताहाराः, प्राणान्प्राणेषु जुह्वति ।**
सर्वेऽप्येते यज्ञविदो, यज्ञक्षपितकल्मषाः

दूसरे कितने ही प्राणायाम के परायण हुये योगीलोग अपान में प्राण का पूरक करके प्राण और अपान की गति रोक कर (कुम्भक करके) फिर प्राण में अपान का हवन (रेचक) करते हैं । तथा अन्य कितने ही नियमित आहार करनेवाले प्राणों का प्राणों में हवन किया करते हैं । ये सभी साधक यज्ञों द्वारा पापों का नाश करनेवाले और यज्ञों को जानने वाले हैं ।

परिशिष्ट भाव - निस्वर्थ भाव से केवल दूसरों के हित के लिये कर्तव्य कर्म करने का नाम "यज्ञ" है । यज्ञसे सभी कर्म अकर्म हो जाते हें अर्थात् बाँधने वाले नहीं होते ।

१२. स्तम्भवृति (चतुर्थ)

प्राणायामरूप यज्ञ - नियमित अहार करते हुये प्राण और अपान को अपने अपने स्थान पर रोक देना ।

By regulating the diet suspension of the acts of inhalation and exhalation. (Shlok 30)

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

चौबीसवे से तीसवे श्लोक तक कुल बारह प्रकार के यज्ञ बताये गये हैं.

इन सब का तात्पर्य है कि हमारी मात्र क्रियाएँ यज्ञरूप ही होनी चाहिये, तभी जीवन सफल होगा । तात्पर्य है कि हमें अपने लिये कुछ नहीं करना है । क्रिया और पदार्थ के साथ हमारा कोई सम्बन्ध नहीं है । हमारा सम्बन्ध परमात्मा के साथ है, जो क्रिया और पदार्थ से रहित हैं । कर्तव्य मात्र केवल कर्तव्य समझ कर किया जाय तो वह यज्ञ हो जाता है । केवल दूसरों के हित के लिये किया जाने वाला कर्म ही **कर्तव्य** होता है ।

All these mean that all our actions should be performed in the form of sacrifice and then our life will be successful. It means that we must do nothing for ourselves. We have no affinity for actions and objects. We have relationship with God who is devoid of actions and objects.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

यज्ञशिष्टामृतभुजो यान्ति ब्रह्म सनातनम् ।
नायं लोकोऽस्त्य् अयज्ञस्य कुतोऽन्यः कुरुसत्तम ॥३१॥

हे कुरुश्रेष्ठ (अर्जुन), यज्ञ के प्रसादरूपी ज्ञानामृत को प्राप्तकर योगीजन सनातन परब्रह्म परमात्मा को प्राप्त करते हैं. यज्ञ न करने वाले मनुष्य के लिए परलोक तो क्या, यह मनुष्य लोक भी सुखदायक नहीं होता. (४.३८, ५.०६ भी देखें) (४.३१)

BG 4.31: Those who know the secret of sacrifice, and engaging in it, partake of its remnants that are like nectar, advance toward the Absolute Truth. O best of the Kurus, those who perform no sacrifice find no happiness either in this world or the next.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

एवं बहुविधा यज्ञा वितता ब्रह्मणो मुखे ।
कर्मजान् विद्धि तान् सर्वान् एवं ज्ञात्वा विमोक्ष्यसे ॥३२॥

वेदों में ऐसे अनेक प्रकार के यज्ञों का वर्णन किया गया है. उन सब यज्ञों को तुम (शरीर, मन और इन्द्रियों की) क्रिया द्वारा सम्पन्न होने वाले जानो. इस प्रकार जानकर तुम (कर्मबन्धन से) मुक्त हो जाओगे. (३.१४ भी देखें) (४.३२)

BG 4.32: All these different kinds of sacrifice have been described in the Vedas. Know them as originating from different types of work; this understanding cuts the knots of material bondage.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक ३३ - **श्रेयान्द्रव्यमयाद्यज्ञाज्ज्ञानयज्ञः परन्तप ।**
सर्वं कर्माखिलं पार्थ ज्ञाने परिसमाप्यते ॥

हे परन्तप अर्जुन! द्रव्यमय यज्ञ से ज्ञान यज्ञ श्रेष्ठ है । सम्पूर्ण कर्म और पदार्थ ज्ञान (तत्वज्ञान) में समाप्त (लीन) हो जाते हैं ।

Sacrifice performed in knowledge is superior to any mechanical material sacrifice. After all, O Parth, all sacrifices of work culminate in knowledge.

मार्मिक बातः- **ज्ञान प्राप्ति की प्रचलित प्रक्रिया -**

शास्त्रों में ज्ञान प्राप्ति के आठ अन्तरङ्ग साधन कहे गये हैं जैसे-
(१) विवेक - सत् और असत् को अलग-अलग जानना विवेक है ।

(२) **वैराग्य** - सत्-असत को अलग-अलग जान कर असत् का त्याग करने अथवा संसार से विमुख होना वैराग्य है ।

(३) **शमादि षट्सम्पति अर्थात् जैसे (शम, दम, श्रद्धा, उपरति, तितिक्षा और समाधान)** । मन को इन्द्रियों के विषियों से हटाना '**शम**' है । इन्द्रियों को विषियों से हटाना '**दम**' है । ईश्वर, शास्त्रादि पर पूज्यभावपूर्वक प्रत्यक्ष से भी अधिक विश्वास करना '**श्रद्धा**' है । वृतियों का संसार की ओर से हट जाना '**उपरति**' है । सर्दी-गर्मी आदि द्वन्द्वों को सहना, उनकी अपेक्षा करना '**तितिक्षा**' है । अन्तःकरण में संकाओं का न रहना '**समाधान** है ।

(४) **मुमुक्षुता** - संसार से छूटने की इच्छा '**मुमुक्षुता**' है । मुमुक्षता होने के बाद साधक पदार्थों और कर्मों का स्वरूप से त्याग करके श्रोत्रिय और ब्रह्मनिष्ठ गुरु के पास जाता है ।

(५) **श्रवण** - गुरु के पास निवास करते हुए, शास्त्रों को सुन कर तात्पर्य का निर्णय करना तथा उसे धारण करना '**श्रवण**' है । श्रर्वन से प्रमाणगत संशय दूर होता है ।

(६) **मनन** - परमात्म तत्व का युक्ति-युक्तयों से चिन्तन करना '**मनन**' है । मनन से प्रमेयगत संशय दूर होता है ।

(७) **निदिध्यासन** - संसार की सत्ता को मानना और परमात्मय सत्ता को ना मानना विपरीत भावना कहलाती है । विपरीत भावना को हटाना '**निदिध्यासन**' है ।

(८) **तत्वपदार्थसंशोधन** -प्राकृत पदार्थ मात्र से सम्बन्ध-विचछेद हो जाये और केवल एक चिन्मयतत्व शेष रह जाय - यह ' **तत्वपदार्थसंशोधन**' है । इसे ही तत्व-साक्षातकार कहते हें ।

Important Point – "A Common Method to Attain Knowledge"

In the scriptures there are eight inward spiritual means to attain knowledge. These are:

1. **Discrimination (vivek)** - consists in distinguishing the real from unreal.
2. **Dispassion** – Renunciation of the unreal or having a disinclination for the world is called dispassion (vairagya).
3. **Six traits** (Quietism, self-control, piety, indifference, endurance, and composure. Deviation of the mind from the sense object is 'Quietism' (Sam). Control over the senses is 'Dam.' Reverence for God & the scriptures is called piety (Shraddha). Total resignation from the world is 'Uparati.'
   Forbearance in the pairs of opposites, such as heat and cold, is 'endurance' (Titiksha). Freedom from doubt is 'composure' (Samadhan).
4. **Desire to attain salvation** – The desire for salvation is 'Mumuksha.' When desire for salvation is aroused, a striver, having renounced material objects and actions, goes to a learned God-Realised preceptor.

5. **Listening to Vedantic texts** – He hears the Vedantic texts (Shrawan).
6. **Cognition** - Then he thinks of the reality about God which is known as cognition (mannan).
7. **Constant and deep meditation** – If he holds that the world is real and that the God does not exist, this is an opposite conception. Removable of this contrary conception is called constant and profound meditation (i.e., Niddhiaasan).
8. **Self-realisation** – When having renounced affinity for all material objects, one gets established in the self, it is called Self-realisation (tattvam-padarth-sanshodhan).

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक ३४ - तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया ।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः ॥

उस तत्वज्ञान को तत्वदर्शी ज्ञानी महापुरुषों के पास जाकर समझ, उनको साष्टांग दण्डवत प्रणाम करने से, उनकी सेवा करने से, और सरलता पूर्वक प्रश्न करने से वे तत्वदर्शी (अनुभवी) ज्ञानी (शास्त्रज्ञ) महापुरुष तुझे उस तत्वज्ञानका उपदेश देंगे ।

Learn the Truth by approaching a spiritual master. Inquire from him with reverence and render service unto him. Such an enlightened Saint can impart knowledge unto you because he has seen the Truth.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

यज् ज्ञात्वा न पुनर् मोहम् एवं यास्यसि पाण्डव ।
येन भूतान्य् अशेषेण द्रक्ष्यस्य् आत्मन्य् अथो मयि ॥३५॥

जिसे जानकर तुम पुनः इस प्रकार भ्रम को नहीं प्राप्त होगे; तथा हे अर्जुन, इस ज्ञान के द्वारा तुम संपूर्ण भूतों को आत्मा —— अर्थात् मुझ परब्रह्म परमात्मा —— में देखोगे. (६.२९, ६.३०, ११.०७, ११.१३ भी देखें) (४.३५) ।

पूर्व शोल्क में भगवान् अर्जुन को ये बताना चहते थे कि अपना कर्म जो सदभाव से परउपकारी हो अथवा लोक कल्याण के निमित किया जाता हो, उस से बड़ा चित की शुद्दी कराने वाला दूसरा और कोई सहज-सरल उपाये नहीं हैं । तत्वदर्शी और ब्रह्मनिष्ठ गुरु के पास जाने से ये तो मिलेगा पर वक्त बहुत लगेगा । पर निशकामभाव में रह कर अपने धर्म को कतव्य समझ कर पालन करने से तुम कोई पाप नहीं कर रहे हो ।

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

अपि चेद् असि पापेभ्यः सर्वेभ्यः पापकृत्तमः ।
सर्वं ज्ञानप्लवेनैव वृजिनं संतरिष्यसि ॥३६॥

सब पापियों से अधिक पाप करने वाला मनुष्य भी सम्पूर्ण पापरूपी समुद्र को ब्रह्मज्ञान (अर्थात अध्यातम विद्या) रूपी नौका द्वारा निस्सन्देह पार कर जायगा. (४.३६)

BG 4.36: Even those who are considered the most immoral of all sinners can cross over this ocean of material existence by seating themselves in the boat of divine knowledge.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक ३७ - **यथैधांसि समिद्धोऽग्निर्भस्मसात्कुरुतेऽर्जुन ।**
ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात्कुरुते तथा ॥

हे अर्जुन ! जैसे प्रज्वलित अग्नि ईंधनों को सर्वथा भस्म कर देती है, ऐसे ही ज्ञानरूप अग्नि सम्पूर्ण कर्मों को सर्वथा भस्म कर देती है ।

As a kindled fire reduces wood to ashes, O Arjun, so does the fire of knowledge burn to ashes all reactions from material activities.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक ३८ - **न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते ।**
तत्स्वयं योगसंसिद्ध कालेनात्मनि विन्दति ॥

इस मनुष्य लोक में ज्ञान के समान पवित्र करनेवाला निसन्देह (दूसरा कोई साधन) नहीं हैं । जिस का योग भलीभाँति सिद्ध हो गया है, (वह कर्मयोगी) उस तत्वज्ञान को अवश्य ही स्वयं अपने-आप में पा लेता है ।

परिशिष्ट भाव - पवित्रमिह - अपवित्रता संसार के सम्बन्ध से आती है । तत्वज्ञान होने पर जब संसार का अत्यन्त अभाव हो जाता है, तब अपवित्रता रहने का प्रश्न ही पैदा नहीं होता । इसलिये ज्ञान में किन्चितमात्र अपवित्रता, जड़ता, विकार नही है ।

In this world, there is nothing as purifying as divine knowledge. One who has attained purity of mind through prolonged practice of Yog, receives such knowledge within the heart, in due course of time.

Important Point – “Pavitramiha” – Affinity for the world causes impurity. On self-realisation, when the universe totally ceases to be, then there is no question of the presence of impurity. Therefore, in the knowledge (of the self) there is neither impurity nor inertness (immovable, laziness) nor modifications.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

श्लोक ३९ - **श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः ।**
ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्ति, मचिरेणाधिगच्छति ॥

जो जितेन्द्रये तथा साधन-परायण हैं, येसा श्रद्धावान मनुष्य ज्ञान को प्राप्त होता है और ज्ञान को प्राप्त होकर वह तत्काल परम शान्ति को प्राप्त हो जाता है ।

Those whose faith is deep and who have practiced controlling their mind and senses, attain divine knowledge. Through such transcendental knowledge, they quickly attain everlasting supreme peace.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

गीता दर्पण का तात्पर्य :-

सम्पूर्ण कर्मों को लीन करने के और सम्पूर्ण कर्मों के बन्धन से रहित होने के दो उपाय हैं - कर्मों के तत्व को जानना और तत्वज्ञान को प्राप्त करना ।

भगवान् सृष्टि की रचना तो करते हैं, पर उस कर्म में और उस के फल में कर्तृत्वाभिमान एवं आसक्ति न होने से वे बँधते नहीं । कर्म करते हुए जो मनुष्य कर्म फल की आसक्ति, कामना, ममताआदि नहीं रखते अर्थात् कर्मफल से सर्वथा निर्लिप्त रहते हैं और निर्लिप्त रहते हुए कर्म करते हैं, वे सम्पूर्ण कर्मों को काट देते हैं । जिस के सम्पूर्ण कर्म संकल्प और कामना से रहित होते हैं, उस के सम्पूर्ण कर्म जल जाते हैं । जो कर्म और कर्म फल की आसक्ति नहीं रखता, वह कर्मों में साङ्गोपाङ्ग होता हुआ भी कर्मों से नहीं बंधता । जो केवल शरीर निर्वाह के लिये ही कर्म करता है तथा जो कर्मों की सिद्धि-असिद्धि में सम रहता है, वह कर्म करके भी नहीं बंधता । जो केवल कर्तव्य परम्परा सुरक्षित रखने के लिये ही कर्म करता है, उस के संम्पूर्ण कर्म लीन हो जाते हैं । इस तरह कर्मों के तत्व को ठीक तरह से जानने से मनुष्य कर्म बंधन से रहित हो जाता है ।
जड़ता से सर्वथा सम्बन्ध विच्छेद हो जाना ही तत्वज्ञान है । यह तत्वज्ञान पदार्थों से होनेवाले यज्ञों से श्रेष्ठ है । इस तत्वज्ञान में सम्पूर्ण कर्म समाप्त हो जाते हैं । तत्वज्ञान के प्राप्त होने पर फिर कभी मोह नहीं होता । पापी से पापी मनुष्य भी ज्ञान से सम्पूर्ण पापों को धो डालता है । जैसे अग्नि सम्पूर्ण इधन को जला देती है, ऐसे ही ज्ञान रूपी अग्नि सम्पूर्ण कर्मों को भस्म कर देती है ।

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

Gita Essence in English – Chapter 4

There are two ways to get rid of all the Karmas (actions) and to be free from the bondage of all the karmas. They are: (1). Knowing the nature of the karmas and (2). attaining the knowledge of the nature of the karmas.

The God creates the universe, but as he is unattached with the action and its results, he is not bonded or affected.

A man who does karma remains unattached to the power, desire, love of the fruits of karma, that is he remains detached from the fruits of karma, and he who does karma remains detached from it, thus he completes the entire karma.

The ones whose entire actions are devoid of thoughts and desires, his entire actions are burnt. One who does not have attachment to actions and the results of actions, despite being well engaged in actions, does not get bound by actions.

One who works only for maintenance of the body and remains equal in the success or failure of his work, is not bound or bonded even after doing the work. One who works only to ensure that the tradition of duty has to continue, his entire deeds are unbinding. In this way, by knowing the nature of karma properly, man become free from the bondage of karma.

To completely break away from inertia is the ultimate wisdom. This philosophy is superior to the sacrifices from substance (material). In this philosophy (Tatvagyan), all the karmas (actions) are destroyed or become "**inaction**".

After attaining Tatvagyan, there is no more attachment. Even the most sinful person washes away all his sins with knowledge. Just as the fire burns all the fuel, similarly the fire of knowledge burns all the deeds.

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

ॐतत्सदिति श्रीमद्भगवतगीतासूपरिष्त्सु ब्रह्मविद्यां योगशास्त्रे
श्रीकृष्णार्जुनसंवादे ज्ञान-कर्म-संयासयोगो नाम चतुर्थोऽध्याय ॥४॥